DOI: 10.51220/hjssh.v9i1.7

Himalayan J. Soc.Sci. & Humanities Vol- 9 pp.45 - 48, December, 2014, ISSN. 0975 - 9891

पत्रकारिता का स्वरूपः साहित्यिक पत्रकारिता (एक संक्षिप्त दृष्टि)

गुड्डी बिष्ट
हिन्दी विभाग,
हे0न0ब0 गढ़वाल केन्द्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल

Received: 13.05.2014 Revised: 26.10.2014 Accepted: 27.11.2014

ABSTRACT

मनुष्य के सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन के लिए पत्रिकाओं का अपना विशेष महत्व है। युगानुरूप प्रत्येक पत्रिका मनुष्य के समक्ष विविध विषयों एवं नई विचारधारा को सामने रखती है। एक समाचार पत्र में छपने वाले अलग-अलग स्तम्भ अपना विशेष महत्व रखते हैं। यह बात अलग है कि पाठक समाज अपनी रूचि के अनुसार ही उसका वरण करता है।

KEY WORDS-पत्रकारिता, स्वरूप

पत्रकारिता लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ ही नहीं, एक सजग प्रहरी भी है। इसे हम राष्ट्र की धड़कन की संज्ञा दे सकते हैं। पत्रकारिता व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के पल-पल का लेखा-जोखा रखती है। यह कार्य विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका नहीं करती है। इनके कार्यों का संवैधानिक उल्लेख है जबकि पत्रकारिता इस सीमा से बाहर है। लोकतंत्र के इन तीन स्तम्भों के अधिकार और कर्तव्य परिवर्तनीय और संशोधन की सीमा के भीतर हैं, जबकि चौथा स्तम्भ (पत्रकारिता) इन प्रतिबन्धों से ऊपर है। पत्रकारिता एक गम्भीर और उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य है। जो जीवन से सीधी और गहराई से जुड़ी है। निश्चय ही यह जीवन की खुशियों और दुखों से सम्बन्ध रखती है और समाज की आशा आंकाक्षाओं को साकार करती है। यह एक अभिजात्य कर्म है।[1]

यह एक चिर परिचित सत्य है कि मूल्यविहीन आज की सामाजिक व्यवस्था में समाज के अन्तिम व्यक्ति की पुकार कार्यपालिका, व्यवस्थापिका, न्यायपालिका के दरवाजे की चौखट तक नहीं पहुँच पाती है। वह थक जाता है, हार जाता है और इस स्थिति में लोकतंत्री व्यवस्था से जब उसका विश्वास डिगने को होता है तो वह चौथे स्तम्भ की ओर निहारता है। यहाँ पत्रकारिता उसे अहसास कराती है कि वह अकेला नहीं है।[2]

यूरोप में सबसे पहले सरकारी समाचार पत्र 1556 ई0 में बेनिस शहर से प्रकाशित किया गया, जिसकी हस्तलिखित प्रतियाँ शहर के विशष स्थानों में चिपका दी जाती थी। उन्हें पढ़ने का अधिकार प्रत्येक नागरिक को नहीं था। इन्हें जो पढ़ना चाहते थे उन्हें कुछ दाम देने पढ़ते थे जिसे गजठा कहा जाता था। पत्र के पर्यायवाची गजट शब्द की उत्पत्ति गजठा शब्द से हुई है। समाचार पत्र की उपयोगिता प्रमुखतः तीन तरह से उपयोगी होती है-

©SHARAD

1.समाचार विदित कराना।
2.मौलिक विचार की स्थापना करना।
3.विज्ञापन का प्रकाशन करना।

अन्य साधनों के द्वारा भी समाचार पत्र पाठक को प्रभावित करता है-

1.संपादकीय लेख के माध्यम से।
2.समाचारों के चयन द्वारा।
3.शीर्षक प्रयोग कला और समाचार प्रदर्शन से[3]।

पत्रकारिता और शिक्षा का अटूट सम्बन्ध है, इसीलिए शिक्षा का विकास पत्रकारिता का विकास माना जाता है। 19वीं शताब्दि में भारतीय कला एवं उद्योग धन्धों को ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने नष्ट कर दिया था, परन्तु कुछ प्रतिभाशाली अंग्रेज शासकों ने भारत में शिक्षा के महत्व और उपयोगिता का अनुभव किया। जिसके परिणामस्वरूप 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कालेजों की स्थापना की गयी। वर्तमान शिक्षा प्रणाली को जन्म देने वाला लार्ड मैकाले था। उसने अपनी शिक्षा के उद्देश्य को व्याख्यायित करते हुए कहा है-''हमें ऐसे वर्ग को बनाने के लिए भरसक प्रयत्न करना चाहिए, जो हमारे और लाखों के मध्य एक कड़ी बने। यह वर्ग रक्त तथा रंग में भारतीय हो और अभिरूचि, विचार, शब्दों और बुद्धि में अंग्रेज हो।''[4] मैकाले की इस शिक्षा नीति से भारतीय भाषाओं का ह्रास हुआ। हिन्दी विकास में अंग्रेजी भाषा ने एक नई बाधा उत्पन्न कर दी। अतएव भाषा के विकास में गत्यावरोधकता के कारण हिन्दी पत्रकारिता का विकास भी रूका।

विभिन्न प्रकार की समस्याओं और कठिनाइयाँ झेलता हुआ हिन्दी का प्रबुद्ध वर्ग इस ओर प्रयत्नशील हुआ। परिणामस्वरूप पं0 युगल किशोर ने 30 मई 1826 ई0 में कलकत्ते से 'उदत्तमार्तण्ड' प्रकाशित किया और इसी पत्र के साथ हिन्दी पत्रकारिता का श्रीगणेश हुआ और बंगाल इसका केन्द्र रहा। तदुपरान्त क्रमशः सन् 1845 ई0 में राजशिवप्रसाद सितारे हिन्द का काशी से 'बनारस अखबार' 1850 में तारामोहन मैत्रेय का 'सुधाकर', 1852 में लाला सदा सुखलाल का 'बुद्धि प्रकाश' आदि पत्र प्रकाशित हुए।

साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में सर्वोपरि नाम भारतेन्दु हरिशचन्द्र का आता है। 15 अगस्त सन् 1867 को काशी से 'कवि-बच्चन सुधा' मासिक पत्रिका का श्रीगणेश भारतेन्दु जी ने किया। 'कवि-बच्चन सुधा' हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है। साहित्य की विधाओं (काव्य/गद्य) के अतिरिक्त इस पत्रिका में सामाजिक कुरीतियों और कुप्रथाओं पर भी 'कवि बच्चन सुधा' ने खूब लिखा। 1873 में भारतेन्दु जी का 'हरिशचन्द्र मैग्जीन' नामक मिसिक पत्र निकला और 1874 में भारतेन्दु जी ने 'बालाबोधिनी' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन किया जो स्त्रियों की दशा में सुधार का महान अभियान था। नारी जागरण का प्रमाण इसी पत्रिका के प्रथम पृष्ठ पर जो निवेदन प्रकाशित होता था वही अपने में पर्याप्त था-'मेरी प्यारी बहनों। मैं एक तुम्हारी नई बहन बाला बोधिनी, आज तुम लोगों से मिलने आई और यही इच्छा है तुम लोगों से सब महीनों में एक बार मिलूँ देखो मैं तुम सब लोगों से अवस्था में कितनी छोटी हूँ क्योंकि तुम अब बड़ी हो चुकी हो और मैं अभी जन्मी हूँ और इस नाते तुम सबकी छोटी बहिन हूँ। इसमें मैं तुम

लोगों से हाथ जोड़कर और आँचल खोलकर यही माँगती हूँ कि मैं कभी भली बुरी, कड़ी-नरम, कहनी-अनकहनी कहूँ, तो मुझे अपनी समझकर क्षमा करना क्योंकि मैं जो कुछ कहूँगी तुम्हारे हित की कहूँगी''[5]।

हिन्दी साहित्यिक पत्रिका यहीं तक नहीं रूकी, बल्कि आगे चलकर सन् 1876 में 'काशी पत्रिका' (सम्पादन बालेश्वर प्रसाद) 1877 ई0 में सर्वोत्तम साहित्यिक पत्र 'हिन्दी प्रदीप' (सम्पादक बालकृष्ण भटट्) था। हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में 'हिन्दी प्रदीप' अपना अलग महत्व रखता है। साहित्यिक समस्याएँ ही नहीं बल्कि सामाजिक एवं राजनीतिक समस्याओं पर भी पत्रिका मुखर रही और समसामयिक परिस्थितिजन्य कारणों और समाधानों को निर्भिकतापूर्वक लिखना भी इसी पत्रिका ने सिखाया। 1881 में 'आनन्द कादम्बनी' (चौधरी पं0 बदरी नारायण उपाध्याय) 1883 ई0 में प्रसिद्ध साहित्यिक पत्रिका 'ब्राह्मण' का प्रकाशन कानपुर से हुआ। इसके सम्पादक पं0 प्रतापनारायण मिश्र थे। हिन्दी साहित्य में गद्य शैली का विकास कैसे हो, इस दिशा में 'ब्राह्मण' पत्रिका की अभूतपूर्व भूमिका रही। भारतेन्दु जी की मृत्यु पर शोक संवेदना-'ब्राह्मण' पत्र में इस प्रकार प्रकाशित हुई थी-''हाय, हृदय विदीर्ण हुआ जाता है। आँसू रूकते नहीं हैं। हाय-हाय सुनने से पहले ही हमारा निर्लज्ज शरीर क्यों न छूट गया? हाय पापी प्राण तुम क्यों न निकल गये और अब तेरा कौन है। स्वामी दयानन्द चल बसे। छाती पर पत्थर धर लिया। केशव बाबू सिधार गये, रो-रोकर कलेजा थाम लिया। हाय देश देशहितैशिता अब विधवा हो गई। हाय हम क्या करेंगें''[6]। इसके पश्चात् 1893 ई0 में 'नागरी नीरद', (पं0 बदरीनारायण उपाधयाय चौधारी प्रेमधन), 1894 ई0 में 'हरिशचन्द्र कौमुदी' 1895 में 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' (पं0 श्यामसुन्दर दास जी) इसके अतिरिक्त अनेकों पत्रिकाएँ रसिक मित्र, 'रसिक वाटिका' आदि भी निकली और 1900 ई0 में सबसे महत्वपूर्ण और साहित्यिक पत्रिका 'सरस्वती' का उदय हुआ।

सन् 1920 से हिन्दी पत्रकारिता जगत में दैनिक पत्रों के नवीन युग का श्रीगणेश हुआ। आठ दैनिक पत्र इस वर्ष प्रकाशित हुए काशी से निकलने वाला 'आज' हिन्दी की उत्कृष्ठ पत्रकारिता का प्रतीक था। इसी वर्ष स्व0 राजेन्द्र प्रसाद ने 'देश' और माखनलाल चतुर्वेदी ने साप्ताहिक 'कर्मवीर' निकाला इस वर्ष भी साहित्यिक उत्थान को प्रश्रय देने वाली एक उल्लेखनीय मासिक पत्रिका 'माधुरी' प्रकाशित हुई। 'सरस्वती के पश्चात 'माधुरी' ही साहित्य की प्रमुख पत्रिकाओं में थी।[7]

सन् 1932 में 'जागरण' नामक पाक्षिक पत्र का प्रकाशन हुआ। इसके सम्पादक शिवपूजन सहाय और प्रेमचन्द जी थे। इसी वर्ष 'रंगीला' नामक सहित्यिक पत्र का उद्भव हुआ जिसके सम्पादक पं0 सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' थे। सन् 1936 में प्रसिद्ध 'विश्वभारती' पत्रिका 'रूपाभ' नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन शान्ति निकेतन से हुआ जो एक शोधपरक साहित्यिक पत्रिका है। पं0 सुमित्रानन्दन पंत जी 'रूपाभ' पत्रिका के सम्पादक थे। तत्पश्चात् चालीस के दशक में 'अज्ञेय' द्वारा सम्पादित 'प्रतीक' विख्यात है। सैंतालीस के बाद प्रकाश में आने वाली पत्रिकाओं की संख्या में काफी वृद्धि हुई जिनमें कुछ प्रमुख हैं-धर्मयुग, 'साप्ताहिकी हिन्दुस्तान' 'आजकल' 'नई कविता' 'आलोचना' 'निकश' 'लहर' 'पूर्वग्रह' 'दस्तावेज' आदि।

निष्कर्षत: कह सकते हैं कि हिन्दी साहित्य में पत्रकारिता अपने चरम पर है। भारतेन्दु युग से लेकर आज तक पत्रकारिता का यह साहित्यिक सफर नई मंजिलें लेकर आया और साहित्य संवर्धन में महत्वपूर्ण

भूमिका अदा की। भारतेन्दु हो या प्रेमचन्द, छायावादी कवि पंत हो या निराला, प्रयोगवादी कवि अज्ञेय आदि सभी लब्ध प्रतिष्ठित साहित्यकारों का योगदान चिरस्मरणीय रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1.उत्तराखण्ड में पत्रकारिता का इतिहास-शक्ति प्रसाद सकलानी, पत्रकार-पृ0 14
2.उत्तराखण्ड में पत्रकारिता का इतिहास-शक्ति प्रसाद सकलानी, पत्रकार-पृ0 14
3.पत्रकारिता के सिद्धान्त-डा0 रमेशचन्द्र त्रिपाठी-पृ0 198
4.पत्रकारिता के सिद्धान्त-डा0 रमेशचन्द्र त्रिपाठी-पृ0 204
5.पत्रकारिता के सिद्धान्त-डा0 रमेशचन्द्र त्रिपाठी-पृ0 206
6.पत्रकारिता के सिद्धान्त-डा0 रमेशचन्द्र त्रिपाठी-पृ0 209
7.पत्रकारिता के सिद्धान्त-डा0 रमेशचन्द्र त्रिपाठी-पृ0 63